महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा

की पी-एच.डी. [हिन्दी] उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-संक्षेपिका

“श्री अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन”

***
*****
****
****

शोध-छात्र

विजय प्रकाश यादव

***
*****
****
****

शोध-निर्देशक

डॉ० दीपेन्द्रसिंह जाडेजा

प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग

महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा (गुजरात)

२०२२

“श्री अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन”

रूपरेखा

प्रथम अध्याय :

श्री अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना :

१.१ नागरों का मूल

१.२ जीवन परिचय

(१.) जन्म

(२.) माता-पिता

(३.) शिक्षा-दीक्षा और परिवार

(४.) जीवन-संघर्ष

१.३ अभिरुचि एवं व्यक्तित्व-विश्लेषण

१.४ साहित्य-सृजन के प्रेरणा-स्रोत

१.५ साहित्य-रचना के विविध आयाम

(१.) उपन्यास-साहित्य

(२.) कहानी-साहित्य

(३.) बालसाहित्य

(४.) नाट्य-साहित्य

(५.) संस्मरण-साहित्य

(६.) जीवनी

(७.) आत्मकथा

(८.) हास्य-व्यंग्य कृतियाँ

(९.) अनुदित साहित्य

(१०.) पत्र-पत्रिकाएँ

१.६ फिल्मी दुनिया से संबंध

१.७ शौक एवं अन्य रुचियाँ

१.८ पुरस्कार एवं सम्मान

१.९ स्वर्गवास

१.१० आधार ग्रन्थ

१.११ सन्दर्भ

द्वितीय अध्याय :

श्री गंगाप्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना :

१.१ जीवन परिचय

(१.) जन्म

(२.) माता-पिता

(३.) शिक्षा-दीक्षा

(४.) परिवार

(५.) जीवन संघर्ष

१.२ अभिरुचि एवं व्यक्तित्व विश्लेषण

१.३ साहित्य रचना के विविध आयाम

(१.) उपन्यास साहित्य

(१.) विराग (१९४१)

(२.) संघर्षों के बीच (१९४४)

(३.) महिमा (१९४५)

(४.) तस्वीरें और साये (१९६४)

(५.) सोनारवाणी के पार (१९६८)

(६.) जहर चाँद का (१९७६)

(७.) मुस्कान है कहाँ (१९८२)

(८.) रांग साइड (१९९२)

(२.) कहानी साहित्य

(१.) सरोद की गत (१९४१)

(२.) आदर्श और यथार्थ (१९४४)

(३.) नया खून

(४.) नई राहें (१९४४)

(५.) काँटो का ताज (१९५०)

(६.) बाँहों के घेरे गर्दन की मजबूरियाँ (१९६२)

(७.) दूधपूत

(८.)मेरी प्रिय कहानियाँ

(३.) बाल साहित्य

(४.) रेडियो नाट्य साहित्य

(५.) यात्रा साहित्य

(६.) समीक्षा

(७.) लेख

१.४ साहित्य सृजन के प्रेरणा स्रोत

१.५ स्वर्गवास

१.६ आधार ग्रन्थ

१.७ सन्दर्भ

तृतीय अध्याय :

अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में प्रतिबिंबित लखनऊ का जन-जीवन

१.१ प्रस्तावना

१.२ अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में लखनऊ का सामाजिक-जीवन

(१.) नवाबों के समय में लखनऊ का सामाजिक-जनजीवन

(२.) मध्यवर्ग का उदय और राष्ट्रीय-चेतना का विकास

(३.) स्वदेशी-आंदोलन

(४.) स्वातंत्र्योत्तर लखनऊ का सामाजिक-जनजीवन

१.३ अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में लखनऊ का सांस्कृतिक-जीवन

(१.) धार्मिक-जनजीवन

(२.) पर्व, त्योहार और मेले

(३.) लखनऊ के लोकगीत

(४.) रीति-रिवाज और प्रथा-परंपरा

(५.) वेशभूषा

(६.) खान-पान और मनोरंजन

(७.) अभिवादन

(८.) बोलचाल

(९.) हिन्दी-उर्दू विवाद

१.४ अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में लखनऊ के चौक का जीवन

(१.) चौक की सामाजिक-संरचना

(२.) चौक का सामाजिक-जनजीवन

१.५ निष्कर्ष

१.६ सन्दर्भ

चतुर्थ अध्याय :

गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिंबित लखनऊ का जन-जीवन

१.१ प्रस्तावना

१.२ गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में लखनऊ का सामाजिक जन-जीवन

(१.) ग्रामीण समाज

(२.) नगरीय समाज

(३.) मध्यवर्गीय समाज

१.३ गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में लखनऊ का सांस्कृतिक जन-जीवन

(१.) लोक संस्कृति

(२.) पूँजीवादी संस्कृति

(३.) सामाजिक संस्कृति

१.४ निष्कर्ष

१.५ सन्दर्भ

पंचम अध्याय :

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में समसामयिक लखनऊ

१.१ कथा-साहित्य में सम-सामयिकता और प्रासंगिकता

१.२ अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में सम-सामयिक लखनऊ व उसकी प्रासंगिकता

१.३ नागरजी के उपन्यासों में सम-सामयिक लखनऊ व उसकी प्रासंगिकता

१.४ अमृतलाल नागर की कहानियों में सम-सामयिक लखनऊ और उसकी प्रासंगिकता

१.५ गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित में सम-सामाजिक लखनऊ व उसकी प्रासंगिकता

१.६ गंगाप्रसाद मिश्र की कहानियों में सम-सामयिक लखनऊ और उसकी प्रासंगिकता

१.७ गंगाप्रसाद मिश्र की कहानियों में लखनऊ

१.८ निष्कर्ष

१.९ संदर्भ

षष्ठ अध्याय :

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में भाषा-शिल्प

१.१ लखनऊ को जीवन्त करते अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद

१.२ नागरजी और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-लेखन में नगरीय आंचलिकता

१.३ नागरजी और गंगाप्रसाद मिश्र का भाषा-शिल्प

१.४ अमृतलाल नागर के कथा साहित्य में भाषा शिल्प

१.५ नागरजी के बालकथा साहित्य का भाषा-शिल्प

१.६ गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में भाषा-शिल्प

१.७ गंगाप्रसाद मिश्र के बाल-साहित्य का कथाशिल्प

१.८ निष्कर्ष

१.९ सन्दर्भ

उपसंहार :

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

शोध-संक्षेपिका

किसी भी कला की आराधना अथवा साहित्य-सृजन में लगे हुए व्यक्ति, जो उसे अपने जीविकोपार्जन का साधन बना लेते हैं, अक्सर बड़ी कठिनाइयों के दौर से गुजरते हैं। उनका त्याग स्तुत्य होता है, परंतु वे व्यक्ति जो अपनी विवशताओं, पारिवारिक उत्तरदायित्व आदि के कारण उसे अपनी रोजी-रोटी नहीं बनाते, कोई नौकरी या व्यवसाय कर लेते हैं और उससे जो समय बचता है, उसमें अपनी सामर्थ्य भर साहित्य का सृजन करते है; उनका योगदान अतिशय मूल्यवान होता है। ऐसे ही व्यक्ति अमृतलाल नागर और पंडित गंगाप्रसाद मिश्र जी थे तथा अपने साहित्य में लखनऊ समाज के जन-जीवन का वर्णन किया है।

अमृतलाल नागर और पंडित गंगाप्रसाद मिश्रजी के कथा-साहित्य में लखनऊ के निम्न मध्यवर्ग एवं मध्यवर्ग की पीड़ा, घुटन, एकाकीपन, मजदूरों का शोषण, तनाव का चित्रण, पारिवारिक विघटन, तलाक की समस्या, खेलों में भ्रष्टाचार आदि का बड़ी सूक्ष्मता से वर्णन मिलता है। स्वतंत्र्योत्तर कथा लेखकों में नागर जी एवं मिश्र जी ने अपने कथा-साहित्य में लखनऊ के सामाजिक जन-जीवन का वर्णन प्रमुखता से किया है और हिन्दी कथा-साहित्य में जो योगदान दिया है उसे कोई भी नकार नहीं सकता। इस युग में हिन्दी कथा साहित्य में प्रवेश करने वाले अमृतलाल नागर और पं. गंगाप्रसाद जी हिन्दी लेखकों में से एक है। हिन्दी कथा-साहित्य के क्षेत्र में उनका प्रमुख स्थान है।

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में लखनऊ के अनेक प्रकार की समस्याओं का निरूपण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हुआ है। इन समस्याओं के अन्तर्गत-पारिवारिक समस्याएँ, सामाजिक समस्याएँ, आर्थिक समस्याएँ, राजनैतिक समस्याएँ एवं धार्मिक समस्याओं के साथ-साथ लखनऊ के अन्य सामाजिक जन-जीवन का चित्रण नागरजी एवं मिश्रजी ने किया है। अतः मैंने अपना शोध विषय प्रो. दीपेन्द्रसिंह जाडेजा सर के निर्देशन में शोध का विषय रखा– "श्री अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन" आलोच्य विषय को केन्द्र में रखते हुए लखनऊ के जन-जीवन के विषय में अध्ययन करने का मेरा उद्देश्य था। इसके उपरान्त चार-पाँच साल के कठोर परिश्रम, अध्ययन, अवगाहन, लेखन और पुनर्लेखन के बाद मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध प्रस्तुत कर रहा हूँ। शोध-प्रबंध के विषय के साथ न्याय करने हेतु और उसके समुचित सम्गुंफन के लिए हमने उसे निम्नलिखित षष्ठ अध्यायों में विभक्त किया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध का आलोच्य विषय "अमृतलाल नागर और गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन" है। हिन्दी साहित्य में नागरजी एवं मिश्रजी के समग्र साहित्य पर अनेक शोध-कार्य उपलब्ध हैं किन्तु उनके कथा साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन पर शोध कार्य का अभाव ही रहा है। नागरजी और मिश्रजी के विराट व्यक्तित्व से अन्वित उनके कथा-साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन का विश्लेषण अभी तक नही हुआ था।

इस दृष्टि से नागरजी और मिश्रजी के कथा-साहित्य में लखनऊ का विश्लेषण और मूल्यांकन मेरी ओर पहला मौलिक प्रयास है।

आखिर ऐसा क्यो होता है? क्यों कोई व्यक्ति एक शहर में रहते हुए वहाँ का हो जाता है? अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के साथ भी यही हुआ। ये दोनों साहित्यकार एक नागरिक की तरह लखनऊ में केवल निवास ही नहीं किया, बल्कि उसे जिया भी तथा अपनी कृतियों में उस लखनवी समाज और संस्कृति को सुरक्षित भी किया। यही दोनों साहित्यकार चाहते भी थे, क्योकि आजादी के बाद जिस रफ्तार से लखनऊ के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में विखराव आया, वह नागरजी और मिश्रजी के लिए असह्य था। उन्हें इस बात पर दुःख था कि लखनऊ की वे सारी परम्पराएँ एक-एक कर मिटती जा रही हैं, जिन्हें नवाबी काल में लखनऊ की जनता ने एक लम्बें संघर्ष के बाद बनाया था। खुद उनका विकास भी उसी लखनवी परिवेश में हुआ। इसलिए नागरजी और मिश्रजी को अपने लखनऊ से प्यार था, वहाँ के लोगों से लगाव था, हिन्दू-मुस्लिम एकता पर गर्व था तथा उस खुदा पर भी गर्व था, जिसने लखनऊ जैसे नगर को आबाद किया। प्रस्तुत शोध में अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के इसी पक्ष के मूल्यांकन पर मैंने अधिक ध्यान दिया है और यह मुझे जरूरी भी लगा। कारण नागरजी एवं मिश्रजी के व्यक्तित्व तथा कृतित्व में जिस तरह से लखनऊ के प्रति गहरा आकर्षण मिलता है, वह किसी अन्य रचनाकार में किसी स्थान के प्रति नहीं दिखलाई पड़ता।

उपर्युक्त मुद्दों की चर्चा के उपरान्त अध्याय के अन्त में समग्रावलोकन की प्रक्रिया द्वारा अध्यायगत निष्कर्ष को रखा गया है। “सन्दर्भानुक्रम” को अध्याय के अंत में ही रखा गया है। उसमें सहायक ग्रन्थ या संदर्भ ग्रन्थ का नामोल्लेख, उनके लेखक तथा पृष्ठ-संख्या इत्यादि को विधिवत् प्रस्तुत किया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ के स्थान पर यदि पत्र-पत्रिका हुए तो उनका भी विधिवत् उल्लेख हुआ है– महीना, वर्ष, पृष्ठ-संख्या, लेखक का नाम आदि के साथ / और लगभग यही प्रविधि शोध-प्रबन्ध के अन्य अध्यायों में भी रही है।

प्रथम अध्याय

श्री अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तुत अध्याय के अन्तर्गत 'अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' हैं जिसके अन्तर्गत जन्म, शिक्षा, पारिवारिक सम्बन्ध, साहित्य सृजन का प्ररम्भ एवं व्यवसाय, प्रेरणा-प्रोत्साहन पर चर्चा करते हुए उनके व्यक्तित्व के विविध पहलुओं पर गम्भीरता से विचार विमर्श किया है साथ ही उनके समस्त कृतियों के सम्बन्ध में जानकारी दी है, तथा उनके विशेष प्रवृत्तियो पर गहरा मंथन किया गया है साथ ही साहित्य सृजन के दौरान उन्हें जो सम्मान एवं पुरस्कार मिले हैं, उनका भी उल्लेख किया गया है। इसके साथ-साथ अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व के विविध रूपों की भी चर्चा की गई है। जैसे वाह्य-व्यक्तित्व, आंतरिक-व्यक्तित्व तथा लेखकीय व्यक्तित्व का आकलन किया गया है। उसके बाद अमृतलाल नागर के जन्म से लेकर निधन तक की भी चर्चा की गई है। लेखन कार्य की प्रेरणा कहाँ से मिला इसका भी उल्लेख किया गया है। अमृतलाल नागर जी के कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए उपन्यास साहित्य, कहानी साहित्य, समीक्षा, निबन्ध, बालसाहित्य, अनुवाद-कार्य, संपादन-कार्य, इन्टरव्यु, नाटक आदि पर चर्चा की गई है और इसके साथ नागर जी का वाह्य जीवन लखनऊ समाज और संस्कृति के आकलन में लगा दिखाई देता है। इसको आत्मसात कर उन्होंने अपने कथा-साहित्य में समाज और संस्कृति की यथार्थ छवि को प्रस्तुत किया है।

मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण परिस्थितियों के अनुरूप होता है। व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश के अनुसार इसका विकास होता है। किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व का अध्ययन भी विशेष महत्व का विषय होता है, क्योंकि; साहित्य में जो विचाराधारा होती है, उसका मूल उसके व्यक्तित्व में होता है। किसी मनुष्य की योग्यताएँ कुछ ऐसी होती है, जो उसे अन्य व्यक्तियों से विलग करती है। उसे व्यक्तित्व कहा जाता है।

"प्रत्येक मनुष्य की अपनी रुचियाँ होती है। एक प्रकार से व्यक्ति की मानक रुचियाँ उसके जीवन का अहम हिस्सा होती हैं। फिर कलाकारों के संबंध में तो यह बात और भी विश्वसनीय स्वर में कहीं जा सकती है। नागरजी का शौक एवं उनकी विभिन्न रुचियाँ ही उनके व्यक्तित्व को बनाने एवं निखारने में सहायक हुई है। एक स्थान पर उनके अंतरंग मित्र डॉ. रामविलास शर्मा कहते है- "नागरजी ऊँचे गौर-वर्ण, तेजस्वी, मगर सरल व्यक्ति है। चेहरे में केवल आँखे ही आँखें हैं। एकदम घनी काली पुतलियाँ, इन आँखों में केवल एक ही भाव छलकता है, 'ढाई आखर प्रेम का'। घृणा, क्रोध, उदासी आदि के भाव उनके होंठो पर हैं। आँखें तटस्थ रहती है। जब होंठो पर इन अस्थाई भावों की क्रीडा समाप्त हो जाती है तब आँखें फिर से मुखर हो उठती है।"

चश्मे में झाँकती अमृतलाल नागर आँखें असीम स्नेह और ममत्व से बोझिल हो रहती थी। नागरजी के रहन-सहन में सुरुचि और सादगी थी। खद्दर का कुर्ता, पायजामा और कभी-कभी धोती उनका प्रिय परिधान रहा। घर में सफेद धोती को लुंगी की तरह लपेट लेते थे। पैर में

खड़ाऊँ उनकी पवित्रता का बोध कराता रहा। भड़कीले कपड़े और आभूषणों से उनको नफरत थी। परम आस्थावान एवं नियमित रूप से पूजा-पाठ करने के बावजूद धार्मिक आडंबर और रुढ़ियों से वह नफरत करते थे।

समाज के इस बदलते परिवेश में नई प्रेरणा एवं उद्भावनाओं को लेकर नागरजी ने अपनी कल्पनात्मक प्रवृत्तियों को और भी उजागर करने का प्रयास किया है। वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे, इसलिए उनमें मौलिक उद्भावनाओं का प्रस्फुटन निरन्तर होता रहा है। नागरजी पान-भाँग और मिष्ठान के बेहद शौकीन रहें। पान का डिब्बा सदा उनके साथ रहता रहा और भाँग खाकर उन्हें लिखने का विशेष मूड़ आता था। रूस (सोवियत संघ) जाते समय भी भाँग का पाउडर बनाकर वह साथ ले गए थे। उनकी रचनाओं में भाँग प्रेमी पात्रों का बड़ा रोचक वर्णन है। नागरजी स्वभाव से विनोदी थे। उन्मुक्त भाव से हँसना और कहकहे लगाना उनकी आदत रही। बच्चों के साथ खेलना, गप्पबाजी और कभी चुहलबाज़ी, चुटकुलेबाजी करने में भी उनकी रूचि थी। 'सेठ बाँकेमल', 'नबाबी मसनद' और 'चकल्लस' के प्रकाशन से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

द्वितीय अध्याय :

श्री गंगाप्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

शोध-प्रबन्ध का द्वितीय अध्याय 'गंगा प्रसाद मिश्र का व्यक्तित्व एवं कृतित्व' है। व्यक्तित्व के अन्तर्गत मैंने मिश्र जन्म, शिक्षा- दीक्षा, पारिवारिक जीवन, व्यवसाय, माता-पिता, अभिरूचियाँ, वैवाहिक जीवन, निःस्वार्थ व्यक्तित्व एवं प्रचार-प्रियता से दूर रहना आदि पहलुओं पर गहराई से अध्ययन किया है। इसके साथ-साथ गंगाप्रसाद मिश्र के व्यक्तित्व के विविध रूपों की भी चर्चा की गई है जिसमे दहेज-रहित विवाह करना, विवाह के उपरान्त पत्नी सरोजिनी ने मिश्र जी को पारिवारिक चिन्ता से सदैव मुक्त रखकर साहित्य सृजन के लिए सदैव स्वतन्त्र रखा आदि। कृतित्व के अन्तर्गत मिश्रजी के समग्र साहित्य पर प्रकाश डाला गया है जिसमें कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास और कहानी को लिया गया है। तथा मिश्रजी के अन्य विधाओं पर भी प्रकाश डाला गया है जिसमें संस्मरण, नाटक, समीक्षा, अनुवाद-कार्य, निबन्ध, बाल साहित्य आदि के विषय में विस्तार से चर्चा की गई है। अध्याय के अंत निष्कर्ष पर विचार किया गया है।

श्री बन्धु कुशावर्ती, जो हाईस्कूल की पढ़ाई के दौरान गंगाप्रसाद मिश्र के प्रधानाधापकत्व की अवधि में राजकीय इंटर कॉलेज, सुलतानपुर के छात्र रहे तथा उसके बाद १९६९ से उनके जीवन पर्यंत बहुत निकट रहें हैं, उन्होंने एक साक्षात्कार में बताया- "पं. गंगाप्रसाद मिश्र जब हमारे विद्यालय के प्रधानाचार्य थे तब हमलोग नही जानते थे कि वह अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा और यशपाल जैसे हिंदी के मूर्धन्य कथाकारों के साथ सतत लेखनरत रहे। हिंदी के महत्वपूर्ण कहानीकार और उपन्यासकार हैं। मेरी निकटता उनसे १९६९ की फरवरी या मार्च में हुई तब वे राजकीय इंटर कॉलेज, फैजाबाद के प्राचार्य थे। मै राजकीय सेवा में आने के बाद फरवरी १९७४ में लखनऊ आ गाया। इसके एक वर्ष बाद फरवरी १९७५ में गंगाप्रसाद मिश्र सेवानिवृत्त होकर जब लखनऊ आए तब मुझे उनका सानिध्य प्रायः मिलने लगा। वह

१९९३ तक लखनऊ रहें हैं, इन १८ वर्षों में जितना बहुविधि लेखन उन्होंने किया वह अधिकांशतः छपता रहा है। मुझे लगता है ये उनके जीवनभर में किए गए लेखन का लगभग एक तिहाई है। उन्होंने बेटे को कोई नौकरी न मिलने से एक छोटा प्रेस लगाकर चलाने के लिए उसे सौंप दिया था। उसके चलने से मिश्रजी के बेटे के हाथ में अपना एक काम तो आ गया पर बेटे के विवाह के बाद उसकी पत्नी को दिनभर हाथ काले करने वाला प्रेस का काम बहुत नागवार गुजरता था। इससे मिश्रजी का एक मात्र बेटा और उनकी बहू बेहतर काम के लिए दिल्ली चले गए और प्रेस बेच दिया गया। इससे पंडित गंगाप्रसाद मिश्र के लेखन में तो कोई व्यवधान तो नही आया, इसलिए वह अपने को लेखन में पूरी तरह व्यस्त रखते रहे। परन्तु १९९० के आस-पास जब उन्हें पार्किंसन रोग हुआ तो उनका चलना-फिरना, उठना-बैठना, लिखना-पढ़ना यहाँ तक कि खाना-पीना भी बहुत प्रभावित हुआ। उनका इलाज भी बहुत खर्चीला था, वह चाहते थे कि बेटा और बहू लखनऊ आ जाएँ और बेटा बहू चाहते थे कि उनके माता-पिता दिल्ली चले आएँ पर गंगाप्रसाद मिश्र को लखनऊ छोड़ना गवारा नहीं था क्योंकि; ७ -८ साल की उम्र में खंडवा से लखनऊ आकर गंगाप्रसाद मिश्र ने जिस लखनऊ में रहते हुए अपनी पढ़ाई लिखाई की, जीवन के संघर्षों से सामना किया और प्रेमचंद के गहरे पाठक होने के नाते प्रेमचंद की परंपरा में अपनी कहानियाँ लिखनी शुरू की तथा यहीं उन्हें न केवल प्रेमचंद से सबसे पहली मुलाकात हुई बल्कि; प्रेमचंद जब प्रगतिशील लेखक संघ के पहले अधिवेशन (अप्रैल १९३६) की अध्यक्षता करने आए तो प्रेमचंद ने ही गंगाप्रसाद मिश्र को प्रगतिशील लेखक संघ का सदस्य भी बनाया था। इससे प्रेमचंद की परंपरा में कहानी लेखन की एक बड़ी जिम्मेदारी गंगाप्रसाद मिश्र पूरी गंभीरता से महसूस करने लगे थे। इसलिए अपने जीवन के अंतिम दिनों (१९३६ के आस-पास) की बीमारी के हालत में लखनऊ आए तो उन्होंने ये जाना कि गंगाप्रसाद मिश्र कहानियाँ भी लिखते हैं, तब प्रेमचंद ने गंगाप्रसाद मिश्र से मंगाकर और उन्हीं से उनकी कहानी 'महराजिन' सुनी थी और कहा था- गंगाप्रसाद तुममें प्रतिभा है, तुम हमेशा लिखते रहना, लिखना कभी मत छोड़ना। प्रेमचंद को गंगाप्रसाद मिश्र अपना साहित्यिक पिता मानते थे इसलिए जब ८ अक्तूबर १९३६ को उनके देहांत की जानकारी गंगाप्रसाद मिश्र को मिली तो एक साहित्यिक पिता के नाते गंगाप्रसाद मिश्र ने अपने जीवन में पिता की दुर्भाग्यपूर्ण अनुपस्थिति जीवन में दूसरी बार महसूस की।

तृतीय अध्याय :

अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में प्रतिबिंबित लखनऊ का जन-जीवन

शोध-प्रबन्ध का तृतीय अध्याय 'अमृतलाल नागर के कथा-साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन' है। जिसके अन्तर्गत लखनऊ का सामाजिक जन-जीवन, लखनऊ में चौक का जन-जीवन तथा लखनऊ के सांस्कृतिक जन-जीवन परप्रकाश डाला गया है। सामाजिक जन-जीवन के अन्तर्गत नवाबी काल में लखनऊ का सामाजिक जीवन, नगरीय समाज का जीवन, मध्यवर्गीय समाज का जीवन एवं उच्च वर्गीय समाज के जीवन पर चर्चा की है। लखनऊ के सांस्कृतिक जन-जीवन के अन्तर्गत लोक संस्कृति, धार्मिक जीवन, पर्व, त्यौहार

और मेले, लखनऊ के लोकगीत, रिति-रिवाज, प्रथा-परम्परा, वेश-भूषा, खान-पान और मनोरंजन, बोलचाल आदि पर प्रकाश डाला गया है। चौक के जन-जीवन के अन्तर्गत चौक की सामाजिक संरचना, चौक का सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं का आकलन करने के बाद मैंने निष्कर्ष पर विचार किया है।

संभवतः प्रेमचन्द इसीलिए बनारस अथवा फणीश्वरनाथ रेणु पूर्णिया या चार्ल्सडिकेंस बार -बार लंदन लौटते हैं। इसी प्रकार नागरजी का कलाकार-हृदय खुली हवा चाहता था। अतः एक अस्थाई पड़ाव के बाद वे पुनः अपने लक्ष्य-स्थल लखनऊ लौट आए। १४ अगस्त, १९४७ को आजादी की पहली रात कविवर श्री नरेन्द्र शर्मा के साथ मुम्बई की सड़कों में नया जोश निहारते हुए अमृतलाल नागर ने यह तय किया कि अब बालू पर लकीरें नहीं बनायेंगे। गांधीवादी-आदर्श में चलती दुकान बढ़ा दी और ३ अक्टूबर, १९४७ को फिर लखनऊ आकर जम गये।" इतना ही नहीं, औपनिवेशिक भारत में लखनऊ शहर एवं ग्रामीण-प्रतिरोध और संघर्ष एक नए रूप में दिखलाई पड़ता है।

अमृतलाल नागर ने अपने उपन्यास 'बूँद और समुद्र' में दिखलाया है कि ताई अपने सौत के पोते को मारने के लिए आटे का पुतला बनाकर जादू-टोना करती है। ताई के पति रायबहादुर भी इस पर विश्वास कर लेते हैं और न चाहते हुए भी अपने पोते की रक्षा के लिए ताई के पास जाकर प्रार्थना करते हैं जैसे- "आटे का पुतला ताई की अमानुषी प्राण लेने की प्रवृत्ति के शक्ति का प्रतीक बनकर मंत्रियों, गवर्नरों, हकीम-हुक्काम और अमीरों के सम्मान पाने वाले जी हुजूरों की सिर आँखों पर बैठने वाले व्यक्ति को गिड़गिड़ा कर भीख माँगने के लिए मजबूर कर रहा था।" स्पष्ट है इस समाज में अंधविश्वास की जड़ें इतनी ज्यादा फैली हुई है कि कभी-कभी व्यक्ति अपनी रक्षा के लिए इन जादू-टोनो का सहारा लेता है।

अमृतलाल नागर ने अपने कथा साहित्य में लखनऊ के जन-जीवन के अन्तर्गत लखनऊ के सामाजिक जन-जीवन, लखनऊ के सांस्कृतिक जन-जीवन एवं लखनऊ के चौक का जन-जीवन का अवगाहन इस अध्याय में किया गया है। कथा साहित्य लेखन के अंतर्गत उपन्यास लेखन में नागरजी ने जितनी गहराई से गोते लगाए हैं, उतने अन्य विधाओं के लेखन में नहीं। नागरजी के उपन्यासों में स्वातंत्र्यपूर्व और स्वातंत्र्योत्तर भारत के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक जीवन का अत्यंत सुरुचिपूर्ण चित्रण किया है। नागरजी अपने साहित्य लेखन में सदैव लीक से हटकर कुछ नवीन प्रयोग किए हैं। प्रतिबद्ध रचनाकार होने के नाते नागरजी अपनी रचनाओं में सामाजिक बोध और युगबोध से जुड़े हुए हैं। नागरजी की अभिरुचियों का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। पुराण, इतिहास, पुरातत्व और संस्कृति के प्रति उनका गहरा लगाव, एक रचनाकार को आकर्षक और प्रीतिकर बना देता है।

अमृतलाल नागर के संपूर्ण कथा साहित्य में दो-तीन बातें उभरकर सामने आती हैं और लगभग यही बातें उनके कथा साहित्य का केंद्रीय-पक्ष भी हैं। अपनी किताबों में, वक्तव्यों में, अमृतलाल नागर ने बार-बार लखनऊ का वर्णन किया है। और उसमें भी चौक की, चाहे 'बूँद और समुद्र' हो या 'अमृत और विष', 'नवाबी मसनद' हो या 'शतरंज के मोहरे', 'करवट' हो या

'पीढ़ियाँ', हो या 'पाँचवा दस्ता', 'हाजी कूल्फीवाला' हो या 'धर्म संकट' हो या 'सती का दूसरा ब्याह'। लखनऊ के विकास को लेकर अमृतलाल नागर ने लिखा है, 'मुगल साम्राज्य की शक्तियों के बिखरने पर पतन के जमाने में लखनऊ कस्बे से शहर बना। कस्बा भी ऐसा, जो बड़ी पुरानी मंडी होने की वजह से बेशुमार दौलत का धनी था। वाजिदअली शाह के जमाने में एक बात बड़े मार्के की हुई। वह था कि हिंदू-मुस्लिम संस्कृतियाँ मिलकर शहर को नई चेतना दे गई। 'बूँद और समुद्र' में तो लखनऊ उसमें भी चौक का सामाजिक-जीवन जीवन्त होकर सामने आया है। किस प्रकार मुहल्ला पूरी भारतीय राजनीति, धर्म और संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है, वह 'बूँद और समुद्र' में गहराई से देखने लायक है। लखनऊ का उनका यह मुहल्ला एक बूँद की तरह है, जिसमें समुद्र की तरह विशाल भारतीय जन-जीवन का दर्शन होता है। शहर के लोग कैसे रहते हैं, क्या सोचते हैं, क्या खाते हैं, क्या पीते हैं, क्या बातें करते हैं - ये सारी बातें इस उपन्यास में एक साथ उभरकर सामने आती हैं। इस उपन्यास में पात्र ही नहीं आते हैं बल्कि उनके साथ पूरा वातावरण आता है। 'बूँद और समुद्र' के साथ ही अन्य कृतियों में आया। चौक की हवेलियाँ, वहाँ की स्त्रियों के जीवन, पारिवारिक संरचना, पीपल के नीचे चबूतरा, ऊँचे-ऊँचे मछली छाप दरवाजे, गोमती का किनारा, हुस्न और रंग-सुगंध से गमकता-दमकता हुआ हजरतगंज, लालबाग, लखनऊ की मिठाइयाँ, नवाबों के तहखाने, काफी हाउस, हनुमान मंदिर, लखनऊ की पुलिस, बोलचाल आदि लखनऊ की सभ्यता और संस्कृति को पूरी गहराई के साथ उभारते हैं।

चतुर्थ अध्याय :

गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में प्रतिबिंबित लखनऊ का जन-जीवन

शोध प्रबन्ध का चतुर्थ अध्याय 'गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में प्रतिबिम्बित लखनऊ का जन-जीवन' है। इस अध्याय के अन्तर्गत मिश्र जी के कथा साहित्य में लखनऊ का सामाजिक जन-जीव न लखनऊ का सांस्कृतिक जन-जीवन पर विस्तृत चर्चा की गयी है। सामाजिक जन-जीवन के अन्तर्गत ग्रामीण समाज, नगरीय समाज, मध्यवर्गीय समाज एवं वंचित और दलित समाज आदि के जन-जीवन का आकलन करके विस्तृत विवेचना किया है। सांस्कृतिक जन-जीवन के अन्तर्गत धार्मिक जीवन, पर्व, त्यौहार और मेले, रिति-रिवाज, प्रथा-परम्परा, खान-पान और मनोरंजन एवं विभिन्न खेलों पर प्रकाश डाला गया है। आर्थिक जन-जीवन के अन्तर्गत आर्थिक अभाव की समस्या, आर्थिक तंगी के कारण उत्पन्न नफरत की भावना, शिक्षा के चलते उत्पन्न आर्थिक समस्या, पूँजिपतियों द्वारा आर्थिक शोषण, महँगाई की समस्या आर्थिक तंगी के चलते वैवाहिक जीवन में तनाव आदि का आकलन किया है। अध्याय के अन्त में निष्कर्ष पर विचार पर किया है।

हिन्दी कथा-साहित्य में प्रगतिशील धारा के सशक्त रचनाकार के रूप में श्री गंगाप्रसाद मिश्र की एक अलग पहचान है। इन्होंने अपने सजग वैज्ञानिक-बोध के आधार पर युगीन-जीवन के संपूर्ण यथार्थ को अभिव्यक्त किया है। मिश्र जी अपने कथा साहित्य के माध्यम से लखनऊ,

समाज की पीड़ा, उत्पीड़न और शोषण के विश्वस्त चित्र प्रस्तुत करते हैं तथा लखनवी-समाज में प्रचलित जीवन-मूल्यों अथवा बनते-बिगड़ते या मिटते-जीवन मूल्यों को अपनी कृतियों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। प्रस्तुत अध्याय में मिश्रजी के कथा-साहित्य में चित्रित लखनऊ के जन-जीवन के अंतर्गत सामाजिक आयामों की अभिव्यक्ति का विवेचन किया गया है।

आज हिंदी साहित्य में कथा-साहित्य एक समर्थ एवं अत्यंत लोकप्रिय विधा है। आज के कथा साहित्य में जीवन का प्रत्येक पक्ष चित्रित होने लगा है। नये-नये प्रयोगों के माध्यम से कथा -साहित्य में अनेक क्षितिजों का निरंतर उद्घाटन हो रहा है। इसमें ग्रामीण-समाज, नगरीय-समाज एवं मध्यवर्गीय-समाज को चित्रित करने के लिए अनेक प्रयोग हुए हैं। पंडित गंगाप्रसाद मिश्रजी एक ऐसे कथाकार है, जिन्होंने अपने कथा साहित्य में ग्रामीण-समाज, नगरीय-समाज एवं मध्यवर्गीय-समाज को उभारा है। यों तो उनके कथा-साहित्य में ग्रामीण, नगरीय एवं मध्यवर्गीय समाज और उनकी समस्याओं का वर्णन हुआ है, लेकिन जिस समाज का सर्वाधिक जन-जीवन यहाँ उभारा है, वह है-लखनऊ का समाज।

प्रस्तुत अध्याय में लखनऊ के सामाजिक जन-जीवन के अंतर्गत लखनऊ के ग्रामीण-समाज, नगरीय-समाज एवं मध्यवर्गीय-समाज के रहन-सहन, खान-पान एवं रीति-रिवाज साथ उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है। वैसे तो पंडित गंगाप्रसाद मिश्रजी को सम्पूर्ण कथा-साहित्य में भारतीय समाज का जन-जीवन समाया हुआ है, खासकर भारतीय मध्यवर्ग। इस मध्यवर्ग के साथ ही उससे संबंधित उच्च और निम्न-वर्ग के समाज की सभ्यता और संस्कृति को उन्होंने लगभग अपने सम्पूर्ण कथा-साहित्य में व्यापक फलक प्रदान किया है और भारतीय मजदूरों के संघर्ष की कथा का भी लेखक ने बड़ा ही मार्मिक और यथार्थ चित्र का वर्णन किया है। इसका एक छोटा सा उदाहरण मिश्रजी के उपन्यास 'विराग' में इस प्रकार है- "जिनका परिवार बड़ा है, उनका यह हाल है कि एक वक्त भी भरपेट रोटी मिलने में मुश्किल पड़ती है। कुछ चने चबाकर ही गुजर करते हैं। जिस दिन रोटी-दाल से भेंट हो जाती है, सब लोग बड़े आनंदमग्न होते हैं। उनके क्वार्टर बड़े ही गंदे और तंग हैं। मजदूरों के पास एक कोठरी है, उसी में खाना बनता है।....जो कुछ अगड़म-बगड़म है, वह रखा जाता है। उसी परिवार में चाहे जितने व्यक्ति हों, सब उसी गीली सील-खाई जमीन पर अपनी फटी बिछौनिया बिछाकर सोते हैं। कई जगह तो एक ओर मजदूर खाना बना रहा है, दूसरी ओर एक फटा पर्दा डाले उसकी पत्नी जच्चा की अवस्था में पड़ी है या संक्रामक रोगों से ग्रसित बीमार पड़ी खाँस रही है।"

लेखक ने यह सब आँखो से देखा है और उतनी ही सजीवता से उसे पाठक के सामने रख दिया है।

इसी उपन्यास में एक और मार्मिक चित्र है- "उस दिन घर में कुछ खाने को न रह गया था। दोनों बच्चे मुरझाए मुँह लिए चटाई पर पड़े थे और छोटा गोद का बच्चा भूखी माँ की छातियों को नोच-नोचकर दूध न पाने की वजह से गला फाड़-फाड़कर चिल्ला रहा था।"

व्यक्ति के ऊपर समाज की वरीयता, मजदूरों और निर्धनों की पक्षधरता, मलिन बस्तियों का चित्रण, शोषण की निंदा, पूँजीपतियों और मिल-मालिकों का विरोध, मजदूर-आंदोलनों का

समर्थन, स्त्री विशेषतः विधवा-स्त्री के प्रति सहानुभूति आदि ऐसी अनेक बातें है, जो इस उपन्यास को प्रगतिशील उपन्यासों की अग्रपंक्ति में रखती है।

इसी के साथ गंगाप्रसाद मिश्र की सांस्कृतिक-चेतना समन्वयवादी है। उनमें प्राचीन भारतीय-संस्कृति के उदात-तत्वों के प्रति आस्था है। मानवता के हित के लिए वह उसके आध्यात्मिक पक्ष की महत्ता स्वीकार करते हैं, किंतु इसका तात्पर्य यह नही है कि संस्कृति के भौतिक पक्ष की उपेक्षा की जाय। मिश्रजी की निश्चित-धारणा है कि मानव-जीवन का स्वास्थ विकास दोनों पक्षों के समुचित-समन्वय में निहित है। यही कारण है कि वे पश्चात्य-संस्कृति के प्रगतिशील तत्वों को अपनाने की प्रेरणा देते हैं। गंगाप्रसाद मिश्र की कथा-साहित्य की कहानी भारतीय संस्कृति की पृष्ठिभूमि में से उभरती है।

पंचम अध्याय :

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य में समसामयिक लखनऊ

शोध प्रबंध का पंचम् अध्याय ‘अमृतलाल नागर तथा गंगा प्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में समसमायिक लखनऊ की प्रसंगिकता’ हैं। इस अध्याय में अमृतलाल नागर और पं० गंगा प्रसाद मिश्र जी के कथा साहित्य में लखनऊ का जन-जीवन किस प्रकार था और आज के लखनऊ का जन-जीवन किस प्रकार है, इस पर बारीकी से अध्ययन करके विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। इसी अध्याय में नागर जी और मिश्र जी के अन्य परिप्रेक्ष्य का भी विशद विवेचन किया है जैसे– लेखन में सामयिक या शाश्वत सवाल। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन के सन्दर्भ में अमृतलाल नागर जी ने ‘मानस का हंस’ और ‘खंजन नयन’ जैसी कृतियों की रचना की, जिसमें गोस्वामी तुलसीदास और सूरदास को आपने अपनी सर्जना का केन्द्र बनाया है। जबकि इस आन्दोलन में कबीर सर्वाधिक प्रगतिशील रहे हैं। लेकिन आपने उन पर कुछ नही लिखा– ऐसा क्यों ?

सबसे बड़ी बात तो यह है कि लेखन तो सामयिक ही होता है। सृजनात्मक लेखन में भले ही हम इतिहास के पुराने दिनों की पृष्ठि भूमि अपनी कथाओं में क्यों न सँजोयें। क्योंकि लेखक अपने पिछले जमाने की जिन अच्छाइयों और बुराइयों को वर्तमान काल में लिखता है, जिसमें कहीं न कहीं तो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सामयिकता का प्रभाव पड़ता ही है। इसकी वजह यह है कि मनुष्य का स्वभाव, उसकी भावात्मक या बौद्धिक गतिविधियाँ कुछ सामयिक परिवर्तन के बाद भी सार्वकालिक हैं। वह हमेशा रहती हैं ऐसा नहीं कि किसी की रचना का मूल्यांकन काल ही करता है। यदि मूल्यांकन काल करता तो आज हम ‘महाभारत’, ‘दशकुमार चरित’ जैसी कृतियों या कालिदास जैसे पुराने कवि अथवा तोल्सतोय, तुर्गनेव आदि रचनाएँ क्यों पढ़ते? जैसी समस्याओं का विस्तृत विवेचन किया है। अध्याय के अन्त में मैंने निष्कर्ष पर विचार किया है।

प्रत्येक साहित्यकार अपने समय और समाज को अपने कथा-साहित्य का विषय बनाकर

वह अपने समय के यथार्थ-जीवन को प्रस्तुत करता है। यदि वह ऐतिहासिक या पौराणिक काल के चरित्रों या कथाओं, मिथकों आदि को अपने कथा-साहित्य का विषय बनाता है, तो एक रचनाधर्मी के नाते उसकी कोशिश होती है कि उसके पूरा-कालीन विषय से जुड़ा लेखन, वर्तमान समय में भी अपनी प्रासंगिकता सिद्ध कर रहा हो!

अमृतलाल नागर ने अपने अधिकांश उपन्यासों और कहानियों में अपने जीवन-काल से ही विषय, कथ्य एवं चरित्र उठाए हैं। इसके विपरीत 'मानस का हंस', 'खंजन नयन', 'सात घूँघट वाला मुखड़ा', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नूपुर' और 'एकदा नैमिषारण्ये' जैसे उनके उपन्यास, जो या तो जीवनीपरक है या इतिहास के कालखण्ड से जुड़े हुए हैं। परन्तु उनके अन्य उपन्यास वर्तमान कथा-समय और उसमें साँस लेते लखनऊ और कुछ कथा निवेश में देश और विदेश तक के जन-जीवन को समेटते है। इस तरह नागरजी ने अपने कथा-साहित्य में लखनऊ की प्रासंगिकता को दर्शाया है।

षष्ठ अध्याय :

अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में भाषा-शिल्प

शोध प्रबन्ध का षष्ठम् अध्याय ‘अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य में भाषा-शिल्प’ के रूप में हैं, इसमें अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा-साहित्य की भाषा पर कथ्य-चेतना की दृष्टि से विचार किया गया है। नागरजी के कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास और कहानी संग्रह की परिगणना की गई है जिसमें ‘महाकाल’, ‘बूँद और समुद्र’ ‘शतरंज के मोहरे’, ‘सुहाग के नुपूर’ ‘अमृत और विष’, ‘सात घूँघट वाला मुखड़ा’, ‘नाच्यौ बहुत गोपाल एवं कहानी संग्रह ‘नवाबी मसनद’, ‘तुलाराम शास्त्री’ ‘पीपल की परी’, ‘कालदण्ड की चोरी’ आदि की चर्चा की गई है। इसी के साथ पं. गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य के अन्तर्गत उपन्यास विधा में– ‘विराग’, ‘संघर्षो के बीच’ ‘तस्वीरें और साये’, ‘सोनारवाणी के पार’, ‘जहर चाँद का’, मुस्काँन है कहाँ”, ‘रांग साइड एंवं कहानी संग्रह ‘सरोद के गीत’, ‘आदर्श और यथार्थ’ ‘नयाखून’ ‘नई राहे’, ‘काँटों का ताज’ आदि उपन्यास और कहानी संग्रह की विधिवत चित्रण किया गया है।

नागरजी जिस क्षेत्र में रहते हैं, उसमें हिन्दुओं में खत्री, कायस्थ, ब्राह्मण और पिछड़ी व अनुसूचित जातियों के लोग हैं। इन सबकी अपनी जो भी भाषा-शैली या बोली है, उसमें नवाबी दौर के लखनऊ के अवशिष्ट प्रभाव मौजूद हैं, जिसमें नागरजी का कोई भी पात्र जब बोलता है, उसमें उसकी अपनी संस्कारगत बोली-भाषा के साथ में इस इलाके में प्रचलित आम-फहम-उर्दू शब्द भी आ जाते हैं। खत्री परिवार की महिलाओं के बोली में उर्दू शब्दों का प्रयोग अपवाद स्वरूप ही मिलता है क्योंकि; उनकी मुस्लिम समाज से मिलने-जुलने और उनके यहाँ आवा-जाही बहुत सीमित रही है। इसी तरह ब्राह्मण, कायस्थ और अनुसूचित जातियों की स्त्रियों की भाषाओं और बोली-बानी में अपनी जातीय संस्कार का प्रभाव ज्यादा है तो सामान्यतः प्रचलित उर्दू शब्दावली का बहुत कम। परन्तु नागरजी के ब्राह्मण, खत्री, पिछड़ी जाति या अनुसूचित

जाति के पात्रों की भाषा-शैली और बोली में 'चौक' क्षेत्र में मुस्लिम बहुल आबादी के आम-फहम -उर्दू शब्द सहज रूप में प्रस्तुत होते हैं; खास करके कायस्थ, ब्राह्मण और खत्री परिवारों के पुरुषों में, इसलिए आजादी से पहले इन जातियों के युवक-युवकों का एक बड़ी आबादी हिन्दी अंग्रेजी के साथ किसी हद तक उर्दू-भाषा भी सीखी हुई रही है। अतः इन सभी जातियों और वर्गों के स्त्री हो या पुरुष, नवोढ़ाएँ हो या कुछ अधिक उम्र की अथवा उम्रदराज बड़ी-बुढ़ियाँ अमृतलाल नागर के कहानियों और उपन्यासों में इन सबकी बोली और लहजे नागरजी बहुत स्वाभाविक अंदाज में प्रस्तुत करते हैं। यह इसलिए है कि अपने 'चौक' क्षेत्र के परिवेश को, हर तरह के पात्रों, चरित्रों के बोली-बानी को नागरजी ने बहुत गहरी पर्यवेक्षक-दृष्टि के साथ न केवल देखा है बल्कि; उसे आत्मसात कर लिया है। इसीलिए उनके हर तरह के पात्रों और चरित्रों की भाषा और बोली-बानी हू-ब-हू उनेक कथा-साहित्य में आती है क्योंकि; नागरजी अपनी कहानियाँ और उपन्यास बोलकर लिखवाने के अभ्यस्त रहें हैं। अतः किसी भी पात्र के बारीक लहजे तक को वह उसके संवाद में प्रस्तुत कर देते हैं।

परन्तु यह विशेषता नागरजी के कथा-साहित्य की एक बड़ी सीमा भी है। वह इसलिए कि १९५६-'६० के बाद जब वह पूरी तरह पूर्णकालिक लेखक के रूप में कहानियाँ, उपन्यास आदि लिखने लगे तो जिस तरह वह पहले 'चौक' क्षेत्र के लोगों के बीच जाकर के उनके वातावरण, परिवेश, बोलचाल आदि को आत्मसात कर लेते थे, पूर्णकालिक लेखक हो जाने के बाद उस सबको वह उतने नजदीक से देख-घूम और जानकर आत्मसात करने के अवसर कम ही निकाल पाते थे। यही वजह है कि नागरजी के अपने 'चौक' क्षेत्र की बोली-बानी और लहजे उनके संपूर्ण कथा-साहित्य में १९५५-५६ से पहले के हैं। उनके ऐतिहासिक उपन्यासों 'सुहाग के नुपूर', 'एकदा नैमिषारण्ये', 'अग्निगर्भा', 'शतरंज के मोहरे', 'सात घूँघट वाला मुखड़ा', 'मानस का हंस', 'नाच्यों बहुत गोपाल' में चूँकी उपन्यास का कथ्य और कालखण्ड उनके 'चौक' क्षेत्रीय कथा और वातावरण से अलग है, तो इन उपन्यासों और चौक क्षेत्रतर कहानियों में भी नागरजी की भाषा-शैली रचना के अनुकूल रही है। 'बिखरे तिनके' और 'अग्निगर्भा' भी नागरजी की 'चौक' क्षेत्रीय परिवेश और बोली-बानी से बहुत हद तक मुक्त हैं।

चूँकि गंगाप्रसाद मिश्र, नागरजी की तरह बचपन (९-१० वर्ष) से ही जिस लखनऊ में रहे हैं। वह नागरजी के 'चौक' क्षेत्रीय लखनऊ से अपने परिवेश में भिन्न है। नागरजी की अपेक्षा गंगाप्रसाद मिश्र की कहानियाँ 'नागरेतर-लखनऊ' के केंद्रित अधिक है। अतः चाहे गंगाप्रसाद मिश्र के उपन्यासों का परिवेश हो और चाहे इस परिवेश के चरित्र, पात्र और वातावरण! मिश्रजी के कथा-लेखन में वह बहुत यथार्थ-रूप में और जीवन्त हो करके आता है। 'सोनारवाणी के पार' प्रगतिशील उपन्यास होने के बावजूद उसकी भाषा में उपन्यास के परिवेश के नाते अनेक स्थलों पर छायावादी भाषा उभरकर आयी है। 'जहर चाँद का' उपन्यास मूलतः ग्रामीण क्षेत्रों के विद्यालयों से जुड़ी शिक्षा से संबंधित है। अतः उसका भाषा-शिल्प मिश्रजी के अन्य उपन्यासों से अलग है। यद्यपि उसमें कथा-नायक कौशल मूलतः लखनऊ का है किन्तु; बाद में वह जिस विद्यालय में अध्यापक नियुक्त होता है, वह लखनऊ के नगर-क्षेत्र से अलग ग्रामीण-क्षेत्र है। अतः

इस उपन्यास का भाषा-शिल्प गंगाप्रसाद मिश्र के पूर्ववर्ती उपन्यासों से अलग स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

इस अध्याय में पात्र परिकल्पना और परिवेश-निर्माण में भाषा का योगदान को अमृतलाल नागर और गंगाप्रसाद मिश्र के कथा साहित्य के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया गया है। कथा साहित्य में पात्र-विशेष की कल्पना हम उनकी बोली-बानी के बगैर नही कर सकते। यह भी ध्यानार्थ रहे कि यहाँ भाषा के लिखित रूप में स्थान पर बोलचाल का रूप ही अधिक कारगर होता है।अतः जो लेखक या लेखिका लोगों के बीच से आते है वे ही यहाँ अधिक सफल रहते हैं। इस सन्दर्भ में प्रेमचन्द, रेणु, नागार्जुन, शैलेष मरियानी हमारे आदर्श हो सकते है तब तो वे लिखित भाषा का उपयोग करते है; किन्तु जब वे उसके भीतर आपको दिखाना चाहते है तब भाषा का बोलचाल का रूप ही सामने आता है। आंग्ल विवेचक राल्फ फोक्स महोदय उस गद्य को “मानव जीवन का गद्य” कहते है। वस्तुतः भाषा का असली मजा तो यही देखने को मिलता है। सभी आलोचक एक स्वर से कथा साहित्य (उपन्यास या कहानी) में पात्रानुकूल भाषा पर विशेष तवज्जो देते है। जिस तरह से कथा साहित्य (कहानी और उपन्यास) की भाषा पात्रानुकूल होती है या होनी चाहिए ठीक उसी तरह से उनकी भाषा देश काल या परिवेश के अनुरूप होगी। गांवों और नगरो की भाषा में निश्चयतः एक अन्तर मिलेगा; ‘देशकाल’ में देशगत या स्थानगत और प्रदेशगत परिवेश और कालगत परिवेश या किसी समय का परिवेश भिन्न-भिन्न हो सकता है। प्रदेश, स्थान, गांव और शहर के हिसाब से लोगों की बोली-बानी में फरक हो जाता है। मसल है– कोश कोश पर बदले पानी चार कोश में बानी। कई बार तो देखा गया है कि पास-पास के दो गाँवों के लोगों की बोली में थाड़ा-बहुत अन्तर आ जाता है। एक गाँव के लोगों में भी जाति और टोला के हिसाब से बोलचाल की भाषा के रूप और ‘टोन’ बदल जाते है।

निष्कर्ष रूप में लखनऊ के सांस्कृतिक जीवन का मूल्यांकन करते हुए कई बातें उभरकर सामने आती हैं। नागरजी ने लगातार अपने उपन्यासों और कहानियों में पतनशील नवाबी संस्कृति की आलोचना करते हुए वहाँ की जन-संस्कृति की प्रशंसा की है। उनका मानना था कि नवाबों ने विलासिता में डूबकर तथा अपने जीवन को और सुंदर बनाने के लिए मनमाने ढंग से कई प्रकार की परंपराओं की शुरुआत की, जिसका लखनऊ की जनता पर अच्छे-बुरे दोनों प्रकार के प्रभाव पड़े। नवाबी काल में लखनऊ की जनता एक प्रकार से नवाबों की विलासिता पूर्ण जिंदगी में शरीक हो गई थी तथा समाज इस विलासिता जिंदगी में शरीक हो गई थी तथा समाज इस विलासिता के गर्त में डूबकर सड़ रहा था। लेकिन इसी विलासिता और सड़ाँध के बीच से नवाबी संस्कृति से हटकर 'लखनवी संस्कृति' ने जन्म लिया, जिसे वहाँ की जनता ने स्वीकारा, सवाँरा तथा व्यापकता प्रदान करते हुए नागरिक सभ्यता के इतिहास में लखनऊ की एक विशिष्ट पहचान कायम की।

इसी प्रकार पंडित गंगाप्रसाद मिश्रजी ने भी लखनऊ की समाज, सभ्यता और संस्कृत का जीता जागता उदाहरण प्रस्तुत किया है जहां उनकी रचनात्मकता ने विस्तार पाया एक तरह से यह उनके लिए भारतीय समाज खासकर मध्यवर्ग की जिंदगी में आ रहे उतार-चढ़ाव का साक्षी

था।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध हिन्दी एवं भाषा में लखनऊ के योगदान तथा साथ में लखनाऊ के रचनाकारों का एवं लखनऊ के साथ-साथ उपलब्ध भारतीयता के सन्दर्भो को परखना है। साहित्य जगत में लखनऊ की अपनी एक पहचान है तथा लखनवी हिन्दी अपना एक विशिष्ट स्थान रखती है। इसका अध्ययन भी प्रस्तुत शोध में रचनाकारों के माध्यम से किया है। अन्त में, लखनऊ की प्रसिद्ध गज़ल गायिका बेगम अक्तर की गायी इस गज़ल के साथ विराम लूंगा –

ऐ मोहब्बत तेरे अंजाम पे रोना आया,

जाने क्यूँ आज तेरे नाम पे रोना आया ।

यूँ तो हर शाम उमीदों में गुज़र जाती थी,

आज कुछ बात है जो शाम पे रोना आया ।

कभी तक़दीर का मातम, कभी दुनिया का गिला,

मंजिल-ए-इश्क में हर गाम पे राना आया ।

जब हुआ जिक्र ज़माने में मोहब्बत का शकील,

मुझे अपने दिल ए नाकाम पे रोना आया ।

<u>सहायक ग्रंथ</u>

१. डॉ. रामचंद्र तिवारी- हिंदी गद्य साहित्य का इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, सप्तम संस्करण : २०९९

२. कथाकार अमृतलाल नागर 'शहर की संस्कृति और इतिहास के कुछ सवाल'- देवेंद्र चौबे, प्रकाशक- किताब घर, १४/४८५५, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-११०००२

३. उपन्यासकार अमृतलाल नागर- बृज कुमार मिश्र, प्रकाशक : प्रिय साहित्य सदन २२२६,ब -

ब्लाक, गली न. ३३, पहला पुस्ता, सोनिया विहार दिल्ली - ११००९४

४. डॉ. नागेंद्र - हिंदी साहित्य का इतिहास (संपादित), मयूर पेपर बैक, ए ९५ सेक्टर ५, नोएडा तीसरा संस्करण २००९ ई.

५. डॉ. (श्रीमती) इंदु शुक्ला - आस्थाओं को समर्पित व्यक्तित्व, प्रकाशन - गंगाप्रसाद मिश्र ग्रन्थावली, गौरव बुक्स, नई दिल्ली

६. देवराज उपाध्याय - आधुनिक हिंदी कथा साहित्य और मनोविज्ञान भगवान दास वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता सिद्धांत और प्रयोग, ग्रंथ प्रकाशन कानपुर

७. अमृतलाल नागर के उपन्यासों में समाज और संस्कृत, प्रकाशक - नेहा प्रकाशक, लक्ष्मीनगर, दिल्ली-११००९२

८. बूँद और समुद्र : अमृतलाल नागर, प्रकाशन - राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. संख्या १६

९. अमृतलाल नागर के उपन्यासों का समाजशास्त्रीय अध्ययन - डॉ अशोक मिश्र, प्रकाशक- ज्ञान प्रकाशन, १२८/९० जी. ब्लॉक किदवई नगर, कानपुर प्रथम संस्करण-२०१२, पृष्ठ संख्या-७

१०. 'विराग : एक प्रगतिशील उपन्यास'- डॉ. पीतांबरदत्त बड़थ्वाल, उद्धृत द्वारा- डॉ. इंदु शुक्ला, गंगाप्रसाद मिश्र ग्रंथावली (भाग ३), गौरव बुक्स, वैस्ट घौंडा, दिल्ली- २०१५, पृ. २२

पत्र-पत्रिकाएँ

१. उजास की धरोहर, संकलन-संपादन- डॉ. शरद नागर, प्रकाशक- वाणी प्रकाशन, संस्करण २००३

२. उत्तर प्रदेश पत्रिका, सितंबर-अक्तूबर २०१६, अंक- १९, संपादक- कुमकुम शर्मा

३. उत्तर प्रदेश, जनवरी, १९९४ में प्रकाशित, बन्धु कुशावर्ती के लेख से

४. जनसत्ता (रविवारी), नई दिल्ली, ०४/०३/१९९०

५. परिवेश, त्रैमासिक पत्रिका, अप्रैल-सितंबर २००२

६. रामविलास शर्मा, हंस (जुलाई १९४२ में प्रकाशित)

७. 'सारिका' १६-३१ अगस्त १९८५, (उद्धृत द्वारा- अमृतलाल नागर के उपन्यास का

अनुशीलन- डॉ. रमेश संभाजी कुरे, समता प्रकाशन, रामबाई नगर)

८. संवेद-११४, मार्च २०१८, संयुक्तांक, संपादक- किशन कालजयी, बी- ३/४४, सेक्टर १६, रोहिणी दिल्ली ८९

९. 'हिंदी सेवी कथाकार पंडित गंगाप्रसाद मिश्र'- डॉ. बन्धु कुशावर्ती, उद्धृत द्वारा- गंगाप्रसाद मिश्र जन्मशती, स्मृतिका